कृषि कुंभ
हिंदी मासिक पत्रिका
खण्ड 06 भाग 02, (जुलाई, 2026)
पृष्ठ संख्या 33–34

फसलों में परागण की प्रक्रिया तथा परागण विधियां

अजीत सिहं[1], अश्वनी कुमार सिंह[1], यासिर अजीज तंबोली[1] एवं जी.आर. चौधरी[2]

[1]सहायक प्राध्यापक, [2]प्राध्यापक,
जयपुर नेशनल यूनिवर्सिटी, जयपुर–302017, भारत।

Email Id: – drajeet.singh@jnujaipur.ac.in

परागण वह प्रक्रिया है जिसमें पुष्प के परागकोष से परागकण निकलकर पुष्प के वर्तिकाग्र पर पहुंच जाते हैं।

विभिन्न पादप प्रजातियों में परागण की प्रक्रिया दो तरीके से संपन्न होती है:

1. स्व–परागण: स्वपरागण की प्रक्रिया में परागकण किसी पुष्प के परागकोष से निकलकर या तो उसी पुष्प या फिर उसी पौधे के किसी दूसरे पुष्प के वर्तिकाग्र पर पहुंचते हैं। अर्थात स्वपरागण की प्रक्रिया में परागकण तथा वर्तिकाग्र दोनों ही एक ही पौधे से आते हैं।

स्वपरागण की प्रक्रिया को दो भागों में बांटा जा सकता है

- **स्वयुग्मन:** इस प्रक्रिया में परागकण फूल के परागकोष से निकलकर उसी फूल के वर्तिकाग्र पर पहुंचते हैं।
- **सजातपुष्पी परागण:** सजातपुष्पी परागण में परागकण परागकोष से निकलने के बाद उसी पौधे के दूसरे पुष्प के वर्तिकाग्र पर पहुंचते हैं।

2. पर–परागण: इस प्रक्रिया में परागकण किसी पुष्प के परागकोष से निकलने के बाद किसी दूसरे पौधे के पुष्प के वर्तिकाग्र पर जाते हैं। अर्थात पर परागण में भाग लेने वाले परागकण और वर्तिकाग्र दोनों ही अलग–अलग पौधे से आते हैं। पर परागण कीटों द्वारा, जल द्वारा या वायु द्वारा किसी भी माध्यम से हो सकता है।

फसलों की परागण विधियां:

लगभग सभी फसलों में स्वपरागण तथा पर परागण दोनों ही क्रियाएं संपन्न होती हैं परंतु अलग–अलग फसलों में दोनों ही विधियो का परिणाम अलग–अलग होता है।

परागण के परिणाम के आधार पर विभिन्न फसलों को तीन वर्गों में बांटा जा सकता है:

स्वपरागित फसलें:

ऐसी सभी फसलें स्वपरागित फसलों की श्रेणी में शामिल होती है जिनमें 95 प्रतिशत से अधिक स्वपरागण होता है तथा पर–परागण 4 या 5 प्रतिशत के करीब होता है। स्वपरागित फसलों में स्वपरागण के लिए उनका उभयलिंगी होना अनिवार्य है। ऐसी फसलों में पर–परागण की मात्रा उस फसल की किस्म, नमी, तापमान कीटों की संख्या तथा वहां के स्थान के अनुसार परिवर्तित होता रहता है।

स्वपरागण के कारण फसलों में आने वाले अनुवांशिक परिवर्तन:

फसलों में स्वपरागण के कारण सहयोग में समयुग्मजता में बहुत तेजी से वृद्धि होती है। इस कारण स्वपरागित फसलों की समष्टियाँ समयुग्मज होती हैं। ऐसी सभी संततियों को जो एक ही समयुग्मज स्वपरागित पौधे से प्राप्त होते हैं, शुद्ध वंशक्रम कहते हैं। शुद्ध वंशक्रम में जितने भी पौधे मौजूद होते हैं उन सभी पौधों का जीनोटाइप समयुग्मज होता ही है साथ ही आपस में तथा जनक पौधे के एक समान भी होते हैं। इसके साथ ही अंत:प्रजनन अवसाद का स्वपरागित फसलों में अभाव होता है। जबकि संकर ओज स्वपरागित फसलों में काफी अधिक परिणाम में पाया जाता है

फसलों में स्वपरागण को बढ़ावा देने वाली क्रियाविधियां:

- **क्लिस्टोगैमीः** गेहूं, जौ आदि फसलों की बहुत सी ऐसी किस्म है जिसमें स्वपरागण का कारण उनमें पुष्पन का ना होना होता है।
- **चौस्मोगैमीः** चौस्मोगैमी की प्रक्रिया धान, गेहूं, जौ आदि में पाई जाती है। चौस्मोगैमी की स्थिति में परागण की क्रिया संपन्न होने के बाद पुष्पन होता है।

इसके अलावा फसलों के पुष्पों का उभयलिंगी होना भी स्वपरागण को बढ़ावा देता है इसके अलावा दलहनी फसलों में कूटक की संरचना तथा टमाटर, बैंगन आदि में परागकोष का वर्तिकाग्र के ऊपर विनयस्त रहना ही स्वपरागण को बढ़ावा देने का कारण होता है।

परपरागित फसलें:

वे सभी फसलें जिनमें 90 प्रतिशत से अधिक पर–परागण होता है तथा 5 से 10 प्रतिशत तक स्वपरागण होता है, उनको परपरागित फसलों की श्रेणी में शामिल करते हैं।

पर–परागण के कारण फसलों में आने वाले आनुवांशिक परिवर्तनः

परपरागित फसलों का जीनप्रारूप अत्यधिक विषमयुग्मज होता है अतः ऐसी सभी फसलों में बहुत अधिक परिणाम में अंतःप्रजनन अवसाद पाया जाता है। अतः ऐसी सभी फसलों में अंतःप्रजनन को जितना हो सके कम करने का प्रयास किया जाता है। इसके साथ ही इन फसलों की किस्में विषमयुग्मज होती है जिसके कारण इनमें संकर किस में सबसे अच्छी होती है।

फसलों में पर परागण को बढ़ावा देने वाली क्रिया विधियांः

- **एकलिंगीयता–** बहुत से फसलों में पुष्पों में केवल एक ही लिंग उपस्थित होता है यही कारण है कि इन फसलों में पर–परागण होता है।
- **भिन्नकाल पक्वताः** जब परागकण तथा वर्तिकाग्र दोनों एक समय पर परिपक्व न होकर अलग–अलग समय पर परिपक्व होते हैं तो इस स्थिति के कारण भी स्वपरागण नहीं हो पाता है और पर परागण को बढ़ावा मिलता है।

भिन्नकाल पक्वता को दो प्रकार की होती हैः

- **प्रोटोएंड्रीः** इसमें परागकण वर्तिकाग्र से पहले ही परिपक्व हो जाते हैं।
- **प्रोटोगाइनीः** इसमें परागकणों के परिपक्व होने से पहले ही वर्तिकाग्र ग्राही हो जाती है।

–नरबंध्यताः इस स्थिति में पुष्प के परागकण निर्जीव तथा निष्क्रिय होते हैं, जिस कारण ऐसे पौधों में पर–परागण की क्रिया संपन्न होती है।

–स्व–अनिषेच्यताः स्व–अनिषेच्यता में पौधों पर उत्पन्न परागकण जीवित और सक्रिय तो होते हैं परंतु स्वयं के पुष्पों का निषेचन नहीं कर पाते हैं।

–बहुदा परपरागितः इस वर्ग में वे सभी फसलें शामिल होती हैं जिनमें पर–परागण 5 प्रतिशत से काफी अधिक 10 से 20, 30, 40 प्रतिशत तक हो जाता है।

निष्कर्ष

परागण फसलों के जीवन चक्र की एक अत्यंत महत्वपूर्ण जैविक प्रक्रिया है, जो बीज एवं फल निर्माण के साथ–साथ कृषि उत्पादन और गुणवत्ता को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करती है। विभिन्न फसलों में स्व–परागण, पर–परागण तथा बहुदा पर–परागण की प्रकृति उनके आनुवंशिक स्वरूप, प्रजनन व्यवहार तथा सुधार कार्यक्रमों की दिशा निर्धारित करती है। स्वपरागित फसलों में आनुवंशिक शुद्धता एवं स्थिरता बनाए रखना अपेक्षाकृत सरल होता है, जबकि परपरागित फसलों में अधिक आनुवंशिक विविधता, संकर ओज तथा बेहतर उत्पादन क्षमता प्राप्त होती है। दूसरी ओर, नरबंध्यता, स्व–अनिषेच्यता, भिन्नकाल पक्वता तथा एकलिंगीयता जैसी प्राकृतिक क्रियाविधियाँ पर–परागण को बढ़ावा देकर नई आनुवंशिक विविधताओं के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

फसल सुधार कार्यक्रमों में परागण की विभिन्न विधियों एवं उनके आनुवंशिक प्रभावों का समुचित ज्ञान अत्यंत आवश्यक है, क्योंकि इसी आधार पर उन्नत, अधिक उपज देने वाली, रोग एवं कीट प्रतिरोधी तथा जलवायु परिवर्तन के प्रति सहनशील किस्मों का विकास किया जा सकता है। साथ ही, प्राकृतिक परागणकर्ताओं के संरक्षण एवं वैज्ञानिक परागण प्रबंधन को बढ़ावा देकर कृषि उत्पादकता एवं खाद्य सुरक्षा को सुदृढ़ किया जा सकता है। इसलिए परागण की प्रक्रिया एवं विधियों की समुचित समझ न केवल कृषि वैज्ञानिकों और पादप प्रजनकों के लिए, बल्कि किसानों एवं कृषि विद्यार्थियों के लिए भी अत्यंत उपयोगी एवं आवश्यक है।